International Journal of Applied Research 2016; 2(10): 439-442

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(10): 439-442
www.allresearchjournal.com
Received: 11-08-2016
Accepted: 16-09-2016

मनोरमा
एम. फिल्. छात्रा संस्कृत विभाग, कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Correspondence
मनोरमा
एम. फिल्. छात्रा संस्कृतविभाग, कला संकाय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

रुद्रट पर हुए शोधकार्यों का सर्वेक्षण

मनोरमा

रुद्रट काव्यशास्त्र के प्रमुख आचार्य हैं। इन्होंने ही प्रथमतया अलंकारों का वैज्ञानिक दृष्टि से वर्गीकरण किया तथा भरत के पश्चात् इन्होंने ही रस को काव्य के पृथक् तत्त्व के रूप में निर्दिष्ट किया। इस प्रकार जहाँ उन्होंने पूर्व–प्रचलित अलंकारवादी परम्परा का सम्यक् निर्वाह किया है वहीं उत्तरवर्ती ध्वनिवादियों के सिद्धांतों की आधारशिला भी स्थापित की है। अतः कहा जा सकता है कि आचार्य रुद्रट ने अलंकारवादी एवं ध्वनिवादी आचार्यों के मध्य एक सेतु का कार्य किया है।

कृतित्व

आचार्य रुद्रट की एकमात्र कृति काव्यालंकार है जिसमें 16 अध्याय तथा 734 पद्य हैं जो कि प्रमुखतया आर्या छन्द में निहित हैं।

प्रस्तुत शोध–पत्र में आचार्य रुद्रट एवं उनकी कृति काव्यालंकार पर हुए शोधकार्यों का विवरण प्रस्तुत किया जाएगा–

1. साक्षात् सम्बद्ध शोधकार्य

1.1 (क) पाण्डुलिपि एवं संपादन कार्य

सर्वप्रथम इनकी पाण्डुलिपि बुहलर को कश्मीर में (1875–76 ई.) में प्राप्त हुई थी।[1] यह पाण्डुलिपि BORI पूना से प्रकाशित संस्कृत पाण्डुलिपियों की ग्रन्थ सूची संख्या द्वादश में 248 अंक से उल्लिखित है। इसकी दूसरी पाण्डुलिपि पीटरसन को (1882–83 ई.) में मुम्बई में प्राप्त हुई[2] तथा यह पाण्डुलिपि भी 159 अंक से संस्कृत पाण्डुलिपियों की ग्रंथसूची में प्रकाशित है। ये दोनों पाण्डुलिपियाँ पूर्ण हैं तथा देवनागरी में लिखित है। इन दोनों में एक ही प्रमुख भेद है कि बुहलर को प्राप्त पाण्डुलिपि नमिसाधु टीका रहित है तथा पीटरसन को प्राप्त पाण्डुलिपि नमिसाधु टीका युक्त है। ये दोनों पाण्डुलिपियाँ BORI पूना में संरक्षित हैं।

(ख) संपादन –

1. *निर्णय सागर प्रैस, मुम्बई* – रुद्रट का काव्यालंकार सर्वप्रथम 1886 ई. में काव्यमाला सीरीज संख्या–2 के अंतर्गत निर्णय सा. प्रैस मु. से प्रकाशित हुआ। इसके संपादक श्री दुर्गाप्रसाद व के. पी. परब थे। यह सबसे प्राचीनतम संस्करण है और नमिसाधु टीका सहित प्रकाशित है।
2. 1909 ई. में *निर्णय सागर प्रैस मुम्बई* से ही प्रकाशित हुआ।
3. 1928 ई. में यहीं से तृतीय संस्करण निकला। इसके संपादक पं. दुर्गाप्रसाद और वासुदेव लक्ष्मण शास्त्री पणसीकर थे। इस संस्करण में पाठ पूर्व की अपेक्षा अधिक शुद्ध एवं प्रामाणिक है। काव्यमाला सीरीज के तीनों संस्करण शुद्धतः संस्कृत भाषा में हैं तथा इनमें मूलपाठ का कोई अनुवाद नहीं है।
4. *हिन्दी अनुसंधन परिषद्, दिल्ली* – सन् 1965 ई. में हि. अनु. परि. ग्रंथमाला के 33वें विभाग के अंतर्गत वासुदेव प्रकाशन, दिल्ली से रुद्रटकृत काव्यालंकार प्रथमतया हिन्दी रूपांतर सहित प्रकाशित हुआ। इसके हिन्दी अनुवादक डॉ. सत्यदेव चौधरी हैं। यह संस्करण भी नमिसाधु टीका सहित है परन्तु टीका की हिन्दी व्याख्या नहीं की गई है।
5. *चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी* – 1966 ई. में चौ.वि. भवन राष्ट्रभाषा ग्रंथमाला के अंतर्गत काव्यालंकार का श्री रामदेव शुक्ल कृत हिन्दी व्याख्या सहित प्रकाशन हुआ। प्रस्तुत संस्करण
6. *इंडिया प्रकाशन* – सन् 1999 ई. में इंडिया प्रकाशन दिल्ली से रुद्रटकृत काव्यालंकार K. Leela कृत अंग्रेजी अनुवाद सहित प्रकाशित हुआ।

इनके अतिरिक्त काव्यालंकार के एक मराठी अनुवाद का उल्लेख सुध माथुर ने अपने शोध–प्रबन्ध की भूमिका में किया है जो सम्प्रति उपलब्ध नहीं है।

1.2 टीकाएँ

1. सर्वप्रथम टीकाकार वल्लभदेव हैं। इन्होंने माघ के शिशुपालवध पर स्वरचित टीका में यह संकेत किया है कि इन्होंने रुद्रटकृत काव्यालंकार की टीका की है।[3] यह टीका सम्प्रति अनुपलब्ध है।
2. रुद्रटकृत काव्यालंकार पर द्वितीय टीका श्वेताम्बर जैनमुनि नमिसाधु द्वारा रचित 'टिप्पण' नामक टीका है। यह टीका मूलपाठ के साथ प्रकाशित उपलब्ध है। नमिसाधु के अनुसार वि.सं. 1125 के वर्षाकाल में यह टीका पूर्ण हुई।[4]
3. आशाधार – रुद्रट काव्यालंकार के एक अन्य टीकाकार जैन आचार्य आशाधर भी थे जिनका उल्लेख पीटरसन ने किया है।[5] इनका समय 13वीं शताब्दी का प्रारम्भिक भाग है। यह टीका भी अनुपलब्ध है।

1.3 – समीक्षात्मक कार्य

1.3.1 प्रबन्धत्मक कार्य

(क) शोध प्रबन्धक

आचार्य रुद्रटकृत काव्यालंकार से साक्षात् संबद्ध एक ही शोधप्रबन्ध प्राप्त हुआ है जिसका विवरण इस प्रकार है–

- **रुद्रट एवं उनका काव्यालंकार** – सुध माथुर (संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, की पीएच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, 1974 ई., नि. डॉ. नागर)

प्रकृत शोध प्रबन्ध रुद्रटप्रणीत काव्यालंकार पर स्वतंत्र रूप से एकमात्र उपलब्ध शोध कार्य है। अतएव रुद्रटप्रणीत काव्यालंकार के अर्थावगमन हेतु अत्यन्त उपयोगी है। शोध प्रबन्ध 9 अध्यायों में विभक्त है। प्रकृत प्रबन्ध में आचार्य रुद्रट तथा उनके काव्यालंकार से संबंधित समस्त तथ्यों एवं विषयों का विस्तृत विवेचन किया गया है। प्रकृत शोध प्रबन्ध मात्र रुद्रट की उद्भावनाओं को ही प्रस्तुत नहीं करता, अपितु उन उद्भावनाओं की पृष्ठभूमि एवं उनके परवर्ती प्रभाव को भी रेखांकित करता है। साथ ही रुद्रट द्वारा प्रस्तुत नवीन मान्यताओं के पीछे आचार्य का क्या दृष्टिकोण है? इसे भी रेखांकित करने का प्रयास करता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जाए तो रुद्रटप्रणीत काव्यालंकार में उद्भावित समस्त तत्त्वों का पूर्ववर्ती एवं उत्तरवर्ती परम्परा सहित ऐतिहासिक विवेचन इस शोधप्रबन्ध में प्राप्त होता है। यही कारण है कि उत्तरवर्ती शोधर्थियों ने इस शोध प्रबन्ध से पर्याप्त सहायता ली है।

इस प्रबन्ध की एक विशेषता यह है कि इसमें सन् 1875 ई. में बूहलर द्वारा कश्मीर से प्राप्त काव्यालंकार की पाण्डुलिपि का भी प्रयोग किया गया है तथा शोधप्रबन्ध के आरम्भ में इस पाण्डुलिपि के 2 चित्र भी प्रस्तुत किए गए हैं। यह पाण्डुलिपि BORI पूना में संरक्षित है।

लेखिका ने अनेक प्रमाणों द्वारा रुद्रट को समन्वयवादी सिद्ध किया है। उनके अनुसार रुद्रट न तो विशुद्ध अलंकारवादी है और न ही विशुद्ध रसवादी। ये किसी भी सिद्धान्त के प्रति विशिष्ट पक्षपाती नहीं हैं। इन्होंने अलंकार, रस, रीति आदि समस्त तत्त्वों का विशद विवेचन किया है।

1.3.2 शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित शोध लेख

- **रसाचार्यः रुद्रटः** – श्री कृष्णकुमारलाल (श्री हरिसिंह गौर वि. वि. सागर मध्यप्रदेश की त्रैमासिकी शोधपत्रिका 'सागरिका', वि.सं. 2014, पृ.382–85 पर प्रकाशित)

संस्कृत भाषा में निबद्ध प्रकृत शोध लेख में रुद्रट अलंकारवादी हैं या रसवादी? इस समस्या पर तर्क व प्रमाणसहित विवेचन करते हुए रुद्रट को रसवादी आचार्य सिद्ध किया गया है।

लेखक के अनुसार भरत के अनन्तर रुद्रट ही वह प्रथम आचार्य हैं, जिन्होंने रस की अलंकारता को अस्वीकार करके उसे पृथक् तत्त्व के रूप में विवेचित किया है। इससे भी बढ़कर रुद्रट ने रसिकों को चतुर्वर्ग पफल की प्राप्ति के निमित्त सरस काव्य के निबंधन का निर्देश कवियों के लिए किया है। इसी प्रसंग में लेखक ने रुद्रट द्वारा 10 रसों के विवेचन तथा शृर्धीर को प्रधान रस मानने से भी रुद्रट का रसवादी होना स्वीकार किया है।

शोधलेख के अनुसार भोज को शृर्धीर को सर्वरसमूलक मानने की प्रेरणा रुद्रट से ही प्राप्त हुई है। लेखक के अनुसार, रुद्रट ने रसध्वनिवादियों के समान ही रीति आदि तत्त्वों का रस से समन्वय प्रदर्शित किया है तथा कवियों को काव्य में रसों के सम्यक् प्रयोग का निर्देश भी किया है। अतः रुद्रट रसवादी आचार्य ही हैं।

लेखक ने पी.वी. काणे आदि द्वारा उपस्थापित इस मत का खण्डन किया है कि अलंकारों का सर्वाधिक वर्णन होने से रुद्रट अलंकारवादी हैं। लेखक के अनुसार यदि कलेवर की दृष्टि से देखा जाए तो मम्मट आदि प्रसिद्ध रसवादी आचार्यों ने भी रस से अधिक कलेवर अलंकारों को सौंपा है, तो क्या इससे मम्मट अलंकारवादी हो जाएँगे?

अपने मत की पुष्टि में लेखक ने डॉ. लालरमायदुपाल द्वारा 'थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ हास्य रसा' संस्कृत ड्रामा' (पृ.31) ग्रन्थ में प्रस्तुत इस कथन को प्रस्तुत किया है कि भोज–मम्मट–रुय्यक–जगन्नाथ आदि द्वारा प्रतिपादित रसस्वरूप से रुद्रट का रसप्रतिपादन किसी भी दृष्टि से कमतर नहीं है तथापि खेद है कि रुद्रट को विद्वान् अलंकारसंप्रदाय का प्रतिनिधि मानते हैं।

इस प्रकार प्रस्तुत लेख में विविध तर्कों व प्रमाणों से रुद्रट का रसाचार्यत्व सिद्ध किया गया है।

2. आनुषंगिक शोधकार्य–

2.1 इतिहास एवं सामान्य समालोचनात्मक ग्रंथ

2.2 इतिहास ग्रंथ

❖ **संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास** – *सुशील कुमार डे*

प्रस्तुत ग्रन्थ में आचार्य रुद्रट के रस, अलंकार, रीति आदि से संबंधित उद्भावनाओं एवं मान्यताओं की पूर्ववर्ती एवं उत्तरवर्ती आचार्यों से तुलना करते हुए समुचित समीक्षा की गई है। तथा आचार्य रुद्रट की नवीन मान्यताओं एवं उत्तरवर्ती काव्यशास्त्र पर उनके प्रभाव को विशेषरूप से प्रदर्शित किया गया है।

❖ **काव्यशास्त्र के परिदृश्य** – *डॉ. सत्यदेव चौधरी*

(अलंकार प्रकाशन, झील, दिल्ली, प्र.सं. 1975 ई.)

प्रस्तुत ग्रंथ का 8वां अध्याय रुद्रट व उनके काव्यालंकार को समर्पित है। इसमें रुद्रट के जीवन–वृत्त, काल आदि सामान्य विषयों पर चर्चा हुई है। रुद्रट व रुद्रभट्ट में अन्तर तथा काव्यालंकार एवं उसके टीकाकारों के सम्बन्ध में भी चर्चा हुई है। इसमें विशेष रूप से रुद्रट के साहित्यशास्त्रीय सम्प्रदाय को लेकर चर्चा हुई है जिसमें लेखक ने यह सिद्ध किया है कि रुद्रट साहित्यशास्त्र के किसी सम्प्रदाय विशेष से संबद्ध नहीं है। उनके अनुसार रुद्रट ने अपने ग्रन्थ के सर्वाधिक भाग में अलंकारों की व्यवस्थित चर्चा करते हुए भी उसे काव्य का अनिवार्य तत्त्व नहीं माना तथा भामहादि के समान रस, भाव आदि विशिष्ट तत्त्वों को रसवद् आदि अलंकारों के रूप में प्रस्तुत नहीं किया अपितु रसवादी आचार्यों के समान उन्हें पृथक् तत्त्व के रूप में स्वीकार किया है।

इतना होने पर भी रुद्रट को रसवादी आचार्य भी नहीं कह सकते, क्योंकि न तो वे रस को काव्य की आत्मा के रूप में स्वीकार करते हैं और न ही रस के आवश्यक तत्त्वों – विभाव, अनुभावादि की व्याख्या करते हैं। यहाँ तक कि भरत के समान रसनिष्पत्ति के विषय में भी अपना कोई मत प्रस्तुत नहीं करते। अतः इन्हें रसवादी भी नहीं माना जा सकता।

ध्वनि, वक्रोक्ति और औचित्य सम्प्रदाय का तो आविर्भाव ही रुद्रट के उत्तरवर्ती आचार्यों ने किया है। रीति–सम्प्रदाय रुद्रट से पूर्ववर्ती अवश्य है तथा रुद्रट ने रीतियों की चर्चा भी की है तथापि उनके मत में न तो रीति काव्य की आत्मा है और न ही गुणों से सम्बद्ध है। रुद्रट के अनुसार, रीति मात्र समास की न्यूनाधिकता पर निर्भर है। अतः ये रीतिवादी आचार्य भी नहीं हैं। सत्यदेव चौधरी के अनुसार, हम इन्हें संग्रहकर्ता के रूप में कह सकते हैं।

❖ **संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास** – *पी.वी. काणे*

प्रस्तुत ऐतिहासिक ग्रन्थ में पी.वी. काणे ने रुद्रट का कालनिर्धारण, जीवन–परिचय, काव्यालंकार के 16 अध्यायों की विषयवस्तु तथा रुद्रट व रुद्रभट्ट की एकता तथा भिन्नता पर विस्तार से प्रकाश डाला है।

अलंकार विषयक वर्णन की अधिकता के कारण पी.वी. काणे ने आचार्य रुद्रट को अलंकारवादी माना है। अपने ग्रन्थ में पी.वी. काणे ने रुद्रट व रुद्रभट्ट की एकता अथवा भिन्नता के विषय में दोनों पक्षों को तर्क एवं प्रमाणों के माध्यम से उपस्थित किया है। इनके अनुसार दोनों ग्रंथों में परस्पर विरोधाभास देखने को मिलता है–

1. रुद्रट ने 10 रस माने हैं किन्तु रुद्रभट्ट ने 9 को ही स्वीकार किया है।
2. रुद्रट ने मधुरादि 5 शब्दाश्रित वृत्तियों की चर्चा की है तथा रुद्रभट्ट ने कैशिकी आदि 4 वृत्तियों की चर्चा की।
3. रुद्रट ने रस–विवेचन में कुछ सामान्य व्यभिचारिभावों का वर्णन किया है तथा रुद्रभट्ट ने प्रत्येक रस के व्यभिचारिभावों का वर्णन किया है।
4. रुद्रट ने रस–विवेचन में नायिका के 3 मुख्य भेद स्वीकार किए बाकी उपभेद माने हैं किन्तु रुद्रभट्ट ने 8 मुख्य नायिका भेद स्वीकार किए हैं।

इत्यादि प्रमाणों द्वारा काणे ने स्वीकार किया है कि दोनों आचार्य भिन्न–भिन्न हैं।

❖ **भारतीय साहित्यशास्त्र** – *बलदेव उपाध्याय*

इस इतिहास ग्रन्थ में आचार्य बलदेव उपाध्याय ने काव्यशास्त्र व साहित्यशास्त्र के सभी आचार्यों के वर्णन क्रम में आचार्य रुद्रट का भी सामान्य परिचय देते हुए उन्हें एक अलंकारवादी आचार्य के रूप में माना है।

2.1.2 शोध प्रबन्ध व समालोचनात्मक ग्रंथ

2.1.2.1 शोध प्रबन्ध

❖ **भरत के उत्तर एवं आनन्दवर्धन के पूर्व की काव्यशास्त्रीय कृतियों में रस–विवेचन** – *गुलाब सिंह* (संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली की पीएच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, 2004 ई.)

प्रकृत शोध प्रबन्ध 9 अध्यायों में विभक्त है। प्रबन्ध के प्रथम 2 अध्याय आचार्य परिचय एवं ग्रन्थ परिचय के रूप में प्रस्तुत हुए हैं। इन दोनों अध्यायों में आचार्य रुद्रट तथा काव्यालंकार का संक्षिप्त परिचय उपलब्ध होता है।

शोध प्रबन्ध का सप्तम अध्याय पूर्ण रूप से आचार्य रुद्रट के रस–विवेचन को समर्पित है। प्रकृत अध्याय में लेखक ने काव्यालंकार में विभिन्न स्थलों पर प्राप्त रस महत्त्व को सर्वप्रथम प्रस्तुत किया है। इसमें काव्यप्रयोजन, दोषविवेचन तथा महाकाव्य लक्षण आदि स्थलों पर प्राप्त रस–महत्ता को दिग्दर्शित किया गया है। तदनन्तर रसस्वरूप एवं रसभेदों का रुद्रट की दृष्टि से संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया है।

अन्य लेखकों के समान इन्होंने भी रुद्रट के सम्प्रदाय पर चर्चा की है। इसमें लेखक ने अलंकारों के विस्तृत विवेचन, ग्रन्थ के नामकरण, रसविषयक सैद्धांतिक चर्चा के अभाव तथा रुद्रट के काव्यलक्षण, प्रयोजन आदि के विवेचन पर भामह आदि अलंकारवादी आचार्यों के प्रभाव को आधार बनाकर रुद्रट को अलंकारवादी सिद्ध किया है। इसके अतिरिक्त ग्रन्थ के आरम्भ में–

> अस्य हि पौर्वापर्ये पर्यालोच्यचिरेण निपुणस्य।
> काव्यमलंकर्तुमलंकर्तुरुदारा मतिर्भवति।।,

ऐसा कहकर आचार्य रुद्रट ने अलंकारों को ही ग्रन्थ का प्रतिपाद्य माना है – ऐसा लेखक का मत है। अतः लेखक के अनुसार रुद्रट की अलंकारवादिता स्वतः सिद्ध है।

परन्तु इस प्रकरण को समाप्त करते हुए लेखक अपने ही मत का खण्डन कर देते हैं। वहाँ लेखक का कथन है कि रुद्रट का अलंकार विवेचन एवं रसविवचेन दोनों ही तुल्यरूप से प्रबल है। अतः रुद्रट दोनों ही धराओं से समानतया प्रभावित रहे हैं ऐसा मानना चाहिए।

❖ **संस्कृत काव्यशास्त्र की कश्मीरी परम्पराः – समीक्षा एवं मूल्यांकन** – *विजय मोहन चौधरी* (संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली की पीएच.डी. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, 1990 ई.)

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध 9 अध्यायों में विभक्त है। ग्रन्थ का दूसरा अध्याय 'कश्मीर के अलंकारवादी आचार्य' नामक हैं, जिसमें भामह, उद्भट एवं रुद्रट इन तीन आचार्यों को समाहित किया गया है। इन्होंने आचार्य रुद्रट के विवेचन में सुधा माथुर के शोध प्रबन्ध 'रुद्रट और उनका काव्यालंकार' के प्रथम 2 अध्यायों को शब्दशः उपस्थित कर दिया है। इनके विवेचन में कोई भी नवीनता नहीं है।

2.1.2.2 लघु शोध प्रबन्ध

अन्य केन्द्रित कार्य के अंगरूप में रुद्रट पर हुए शोधकार्यों में केवल एक ही लघुशोधप्रबन्ध मिलता है जिसका विवरण इस प्रकार है–

❖ **रस–सिद्धान्त के विकास में आचार्य विश्वनाथ का योगदान** – *कु. सीमा मल्होत्रा* (संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली की एम.पिफल्. उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध, 1981 ई.)

प्रस्तुत लघुशोधप्रबन्ध के प्रथम अध्याय 'रस–सिद्धान्त के विकास का इतिहास' में भरत से विश्वनाथ पर्यन्त सभी आचार्यों का सामान्य परिचय दिया गया है। इसके पश्चात् 10वें अध्याय – रस–भेद–निरूपण में क्रमशः सभी आचार्यों द्वारा सम्मत भेद दर्शाते हुए यह स्वीकार किया गया कि रुद्रट के प्रेयान् रस में कहीं–न–कहीं 'वत्सल' के बीच निहित हैं तथा किसी न किसी रूप में इसे प्रणयेतर प्रेम प्रसंगों से जोड़ा जा सकता है।

2.1.3 पत्रिकाओं में प्राप्त शोधलेख

❖ **काव्यशास्त्र में भाषा–चिन्तन –** *सत्यदेव चौधरी* (Journal of Akhil Bhartiya Sanskrit Parishad के जुलाई 1975 ई. – जनवरी 1976 ई., पृ.127–140 पर प्रकाशित)

प्रस्तुत शोधलेख में काव्यशास्त्र में अनुस्यूत भाषाविषयक चिन्तन को प्रस्तुत करते हुए लेखक ने भाषा की आवश्यकता, भाषा की उत्पत्ति, भाषा का चरम अवयव (पद/वाक्य) वाचक शब्द और संकेतग्रह एवं अलंकारादि में भाषा तत्त्व–इन सभी विषयों पर उपलब्ध समस्त काव्यशास्त्रीय विचार को उत्तम रीति से प्रस्तुत किया है। विवेचन के इसी क्रम में लेखक ने रुद्रट द्वारा विवेचित वाक्य, जाति तथा काव्यलक्षणों का प्रयोग किया है। रुद्रट के भाषातत्त्व सम्बन्धी चिन्तन के सामान्यज्ञान हेतु प्रकृत लेख पठनीय है।

❖ **संस्कृतकाव्यशास्त्रो रीतिः – संक्षिप्त विवेचनम् –** *निरुपमा त्रिपाठी* (मध्यप्रदेश से प्रकाशित सागरिका के वि.सं. 2064 ;39/2, पृ.149–52 पर प्रकाशित)

प्रकृत शोधलेख में आचार्य भरत से लेकर विश्वनाथ तक रीति के विकासव्रफम का सामान्य प्रदर्शन किया गया है। लेख में आचार्य रुद्रट द्वारा निर्दिष्ट रीति समासाधारित वैदर्भी, पांचाली, लाटी, गौडी भेदों का नाम्ना निर्देश किया गया है तथा रस के औचित्यानुसार रीति के प्रयोग को रुद्रट सम्मत माना गया है।
लेखिका के अनुसार रुद्रट ने रीति तथा रस के घनिष्ठ सम्बन्ध को स्थापित किया है। रीति तत्त्व की विकास यात्राा के सामान्य ज्ञान हेतु प्रकृत शोध लेख उपयोगी है।

❖ **पूर्वध्वनिकालिकानामलंकारिकाणां रसविचारः –**
जयन्तमिश्र (विश्वेश्वर वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर से प्रकाशित 'विश्वसंस्कृतम्' पत्रिाका के वि.सं. 1964, पृ.201–207 पर प्रकाशित)
प्रकृत शोध लेख में आचार्य भरत से लेकर रुद्रट तक की रसविषयक मान्यताओं का विवेचन किया गया है। रुद्रट के विषय में लेखक का मत है कि इनका रस विवेचन न केवल पूर्ववर्ती अलंकारवादियों से अपितु उत्तरवर्ती ध्वनिवादियों के रसविवेचन से भी अधिक विस्तृत एवं व्यवस्थित है। रस को पृथक् तत्त्व मानते हुए भी रुद्रट को अलंकारवादी स्वीकार करने का कारण लेखक ने यह माना है कि रुद्रट ने प्रतीयमान अर्थ का 'भाव' नामक अलंकार में अन्तर्भाव किया है।
रुद्रट के रसविषयक विचार को समझाने के लिए लेखक ने 12वें अध्याय की द्वितीय कारिका पर प्रस्तुत नमिसाधु के मत को उद्धृत किया है। प्रकृत स्थल की टीका में नमिसाधु ने प्रश्न किया है कि रसों को अर्थालंकारों में न पढ़कर रुद्रट ने पृथक क्यों पढ़ा है? तदनन्तर इसके समाधान में नमिसाधु ने कहा है कि, क्योंकि अलंकार आदि रस के कृत्रिम धर्म हैं तथा रस तो सौन्दर्यादि के समान सहज गुण हैं इसीलिए रस का पृथक निर्देश किया है।
इस प्रकार प्रकृत शोध लेख रस की अलंकारता अथवा रस के पृथक् तत्त्व के रूप में स्थान को समझने हेतु पठनीय है।

❖ **अलंकारचिन्तनस्य चिरन्तनमैतिह्यम् –** *काशीनाथ मिश्र* (कामेश्वरसिंह दरभंगा, सं. वि.वि., बिहार से प्रकाशित पाटलश्री में, अक्टूबर 1968 ई., पृ.33–44 प्रकाशित)
प्रकृत शोधलेख में ऋग्वेदादि संहिताओं, उपनिषदों, निरुक्त, महाभाष्य तथा द्वितीय शताब्दी के महाक्षत्रप रुद्रदामन् के सुदर्शनसेतु शिलालेख आदि में प्राप्त अलंकारतत्त्वों के निर्देशपूर्वक अलंकारों के ऐतिहासिक विकास क्रम के आरम्भ को प्रदर्शित किया गया है। तदनन्तर काव्यशास्त्रीय परम्परा में आचार्य भरत से लेकर आचार्य मम्मट तथा उनके अनुयायियों द्वारा विवेचित अलंकार तत्त्व की ऐतिहासिक विकासयात्रा का क्रमिक विवेचन किया है।
वर्णन के इसी प्रसंग में लेखक द्वारा आचार्य रुद्रट द्वारा विवेचित अलंकारों का भी वर्णन किया गया है। इन्होंने भी अलंकारों के विशदतया वर्णन एवं प्रतीयमान अर्थ को भावालंकार में समाहित करने के आधार पर रुद्रट को अलंकारवादी माना है। आचार्य रुद्रट द्वारा प्रस्तत शब्दालंकारों के 5 तथा अर्थालंकारों के 4 समूहों का निर्देश करते हुए लेखक ने रुद्रट के अलंकार विवेचन में प्राप्त कतिपय विशिष्ट नियमों का निर्देश किया है। यथा – कवि को केवल रसातिरेक के वशीभूत होकर पदार्थों के स्वाभाविक धर्मों की ओर से नेत्र बंदकर वर्णन नहीं करना चाहिए, क्योंकि हेतुरहित वाणी आदर को प्राप्त नहीं करती। तदनन्तर लेखक ने रुद्रट द्वारा प्रस्तुत भावालंकार के लक्षणोदाहरणों पर भी चर्चा की है।
अलंकारसिद्धान्त की ऐतिहासिक विकासयात्रा के ज्ञान हेतु प्रकृत लेख पठनीय है। ?

निष्कर्ष :
इस संक्षिप्त सर्वेक्षण के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि आचार्य रुद्रटकृत–काव्यालंकार स्वयं जितना महत्त्वपूर्ण है उतनी सूक्ष्मता से उस पर शोधकार्य नहीं हुए हैं। स्वतंत्र रूप से मात्र एक शोधकार्य प्राप्त होता है। अन्य ग्रंथों में भी जो कार्य हुए हैं वे प्रायः आचार्य रुद्रट पर केन्द्रित हैं, काव्यालंकार पर नहीं।
आचार्य रुद्रट एवं उनके काव्यालंकार–विषयक अनेक तथ्य अभी भी अस्पष्ट हैं जिन पर व्यापक दृष्टि से शोधकार्य अपेक्षित हैं। यथा–

1. रुद्रट का निवास–स्थान
2. रुद्रट एवं रुद्रभट्ट
3. रुद्रट का सम्प्रदाय (अलंकार या रस)
4. रुद्रट का रस–विवेचन एवं उसका परवर्ती काव्यशास्त्र में स्थान
5. रुद्रट के उत्तरवर्ती काव्यशास्त्रीय सम्प्रदायों पर प्रभाव
6. रुद्रट का प्रेयान् रस

References

1. Kashmir Report, J.B.B.R.A.S. 12. (Extra)
2. Peterson Report, I. Ibid. 16:14.
3. संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास, पी.वी. काणे, पृ.86
4. रुद्रट काव्यालंकार, हिं.अनु. परिषद्, संस्करण, पृ.430
5. Peterson Report, 2:28.